धर्म और राजनीति

श्री स्वामी करपात्री जी महाराज

प्रकाशक :—श्री सन्तशरण वेदान्ती

प्रचार मंत्री

अ० भा० रामराज्य परिषद्

दुर्गाकुण्ड, वाराणसी
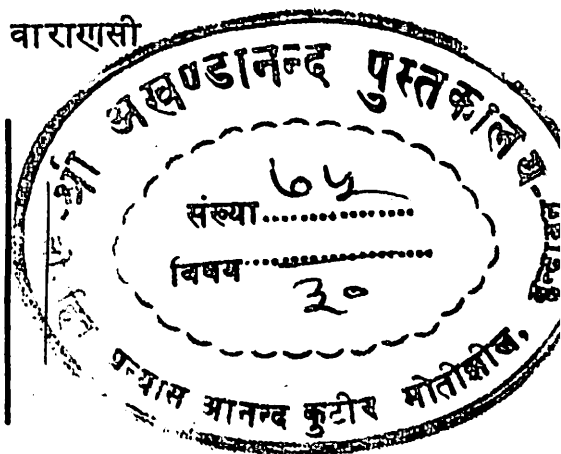
पचास पैसा

प्रकाशक—

श्री सन्तशरण वेदान्ती

प्रचार मंत्री—

अ० भा० रामराज्य परिषद्

द्वितीय संस्करण २०००

मुद्रक—

कामधेनु यन्त्रालय, भदैनी

वाराणसी।

श्री हरिः

प्रकाशकीय वक्तव्य

आज कुछ लोग धर्म को राजनीति से पृथक् समझने लगे हैं। इसी कारण धर्म विरोधी राजनीतिक वादों का उदय हो रहा है।

भारत की राजनीतिक विचारधारा में धर्म का ही सर्वोपरि महत्व दिया गया है। "धर्मेण शासिते राष्ट्रे न च बाधा प्रवर्तत्ते" धर्म और नीति दोनों संगठन से ही समाज-राष्ट्र का संगठन होता है, किन्तु आज के विचारकों की खोज इसके विपरीत चल रही है। अतएव इस सन्दर्भ में उचित मार्ग प्रदर्शन की बड़ी ही आवश्यकता थी। पूज्य स्वामी करपात्री जी महाराज ने धर्म और नीति के सम्बन्ध में प्रस्तुत पुस्तक में शास्त्र एवं युक्तियों से—बड़ा ही सुन्दर प्रकाश डाला है।

हमें पूर्ण विश्वास है कि धर्म और नीति के वास्तविक स्वरूप को न पहचानने वाले विचारकों को अवश्य लाभ होगा।

श्री सन्तशरण वेदान्ती

प्रचार मंत्री

अ० भा० रामराज्य परिषद्

श्री स्वामी करपात्री जी महाराज

धर्म और राजनीति

—*—

धर्म और नीति

अभ्युदय का कारण जिससे हो, वही 'धर्म' और अभ्युदय की प्राप्ति जिससे हो, वही 'नीति' है। फलतः दोनों का एक ही अर्थ होता है। इसलिये कुछ लोग तो नीति को ही धर्म कहते हैं। पर कुछ लोग लौकिक अभ्युदय (उन्नति) के साधन को नीति और पारलौकिक उन्नति के साधन को 'धर्म' कहते हैं। धर्म और नीति का परस्पर बहुत घनिष्ठ सम्बन्ध रहता है। नीति से ही शास्त्र और धर्म प्रतिष्ठित होते हैं, नीति के बिना शास्त्र और धर्म नष्ट हो जाते हैं—'नश्येत्त्रयी दण्डनीतौ हतायाम्।' नीति से ही सामाजिक सुव्यवस्था, शान्ति होने पर धर्म के अनुष्ठान में सुविधा होती है और धर्मभावना फैलने से ही नीति भी कार्यान्वित एवं सफल होती है।

धर्म नीति का पति है

वास्तव में धर्म नीति का पति है। उससे विरहित होकर नीति विधवा है। बिना धर्म रूप पति के विवा नीति पुत्रोत्पादन नहीं कर सकती। उसमें फलोत्पादन की क्षमता नहीं रहती। वैधव्य में वह केवल विलबिलाती है, असफल होकर विलाप करती है। धर्म विरुद्ध नीति कहीं तत्काल अभ्युदय का साधन होती हुई भी परिणाम में अहितकारिणी सिद्ध होती है। दुष्परिणाम-शून्य वास्तविक अभ्युदय के साधन को ही नीति कहा जा सकता है। जो परिणाम में अनिष्टकर हो, वह सच्चा अभ्युदय नहीं, केवल अभ्युदयाभास है, अतः उसका साधन भी नीति नहीं केवल नित्याभास है। अर्थानुबन्ध, धर्मानुबन्ध अभ्युदय ही सच्चा अभ्युदय है। विष से मिला हुआ मधुर पक्कान्न सेवन में तात्कालिक आनन्द देनवाला होने पर भी मृत्यु का कारण होता है, यह स्पष्ट ही है। धर्म विहीन नीति आरम्भ में भले ही चमत्कारिक सफलता दिखलाये, पर अन्त में वह पतन की ही ओर ले जायगी। समस्त महाभारत इसका ज्वलंत उदाहरण है। धर्म विरुद्ध कूटनीति का अनुसरण करके दुर्योधन को चौदह वर्ष के लिये अतुल साम्राज्य का उपभोग मिल गया, पर अन्त में पूर्ण पतन ही हुआ। धर्म-नीति के अनुगामी बनकर युधिष्ठिर को चौदह वर्ष बनों में भटकना पड़ा पर अन्त में साम्राज्य-सिंहासन प्राप्त हुआ। इतिहास, पुराणों में सर्वत्र यही दिखलाया गया है कि 'यतो धर्मस्ततो जयः।'

स्वतन्त्रता का प्राण—आध्यात्मिकता

आध्यात्मिक, धार्मिक सांस्कृतिक स्वतन्त्रता के बिना भौतिक स्वतन्त्रता बिना प्राण की मृतप्राय स्वतन्त्रता होती है। प्रायः विजेता लोग विजित राष्ट्र की केवल भौतिक परतन्त्रता से ही संतुष्ट नहीं होते, अपितु देश के दर्शन, साहित्य एवं इतिहास को नष्ट करके विकृति साहित्य और शिक्षा द्वारा राष्ट्र की आत्मा को भी पराधीन बनाने का प्रयत्न करते हैं। वे समझते हैं कि आध्यात्मिक, सांस्कृतिक स्वतन्त्रता वाला देश कभी न कभी जागरित होकर भौतिक पराधीनता की जंजीर तोड़ फेंकता है, परन्तु आत्मिक, मानसिक दृष्टि से पराधीन देश रही-सही स्वाधीनता को भी नष्ट कर लेता है और सदा के लिए पराधीन हो जाता है, कभी भी उठने लायक नहीं रहता। किसी का मस्तिष्क क्लोरोफार्म आदि द्वारा विकृत या नष्ट कर दिया जाय तो फिर भले ही उसे कारागार से निकाल दिया जाय, हथकड़ी-बेड़ी काट दी जाय, तो भी क्या लाभ? जैसे देह में प्राण होता है, वैसे ही विश्व में धर्म होता है। प्राणों के बिना जैसे देह मुर्दा होता है, वैसे ही धर्म के बिना विश्व। धर्म ही विश्व की चेतना है— 'धर्मो विश्वस्य जगतः प्रतिष्ठा'। शंकर, तुलसी, समर्थ आदि के प्रयत्न से जब तक देश में आध्यात्मिक स्वतन्त्रता, धर्मभावना थी, जब तक भौतिक दृष्टि से पराधीन होते हुए भी देश में जीवन था। हकीकत एवं गुरुगोविन्दसिंह

के बच्चों जैसे हजारों बालक थे, जो सिर कटवा देना पसन्द करते थे, परन्तु किसी सुख, सम्पत्ति या राज्य के प्रलोभन से शिखा के दो बाल कटवाना पसन्द नहीं करते थे। देश बराबर वीरता के साथ अपने धर्म और राष्ट्र की रक्षा के लिए दुश्मनों का सफल मुकाबला करता रहा। अंग्रेजी की कूटनीतिमय शिक्षा एवं साहित्य के द्वारा धर्म तथा संस्कृति पर भयंकर प्रहार हुआ, जिसके कारण देश के युवक अपने पूर्वजों एवं अपने आपको भूल गये। अंग्रेजों की शिक्षा तथा बिगाड़े हुए इतिहास से उन्हें अपने ही पूर्वजों तथा आर्षदर्शन, साहित्य, इतिहासों पर अविश्वास एवं घृणा हो गयी और वे अपने को पश्चिमोत्तर एशिया या उत्तरी ध्रुव का निवासी मान बैठे, विदेशी बन गये, जो काम शत्रुओं के करने का था, स्वयं करने लग गये और हर बात अपने मस्तिष्क से नहीं किन्तु सात समुद्र पार वाले पाश्चात्यों के मस्तिष्क से सोचने लग गये। परिणाम हुआ कि आज भले ही अंग्रेज चले गये, परन्तु अंग्रेजियत का राज्य भारतीयों के मस्तिष्क पर ज्यों का त्यों कायम है। समझदार मानते हैं कि यदि अंग्रेजियत न गई, तो गोरे अंग्रेज नहीं तो काले अंग्रेज सही, राज्य अंग्रेजों का ही रहेगा।

× × • × ×

स्वतन्त्र विधान, स्वतंत्र संस्कृति, स्वतंत्र भाषा और अपनी स्वतन्त्र परम्परा के अनुसार सब काम होने से ही देश की स्वतन्त्रता समझी जाती है।

वास्तविक स्वतंत्रता का स्वरूप

अभ्युदय निःश्रेयस के अनुकूल स्वतन्त्रता ही स्वतन्त्रता है। अभ्युदय निःश्रेयस के प्रतिकूल स्वतन्त्रता उच्छृङ्खलता है और वह है आत्महत्या के समान, जिसका कोई भी सभ्य समाज आदर नहीं कर सकता। सदाचार मिटाने, दुराचार फैलाने की स्वतन्त्रता किसी भी देश को अभीष्ट नहीं। जिस स्वतन्त्रता से सिंह एवं व्याघ्र, शृगाल और गर्दभ बन जाय, वह वर नहीं अभिशाप है। इसी तरह जिस स्वतन्त्रता से भारत भारत न रह जाय, आर्य अनार्य, हिन्दू अहिन्दू, वैदिक अवैदिक हो जाय, अपनी संस्कृति, अपना धर्म, अपनी भाषा न रह जाय, वह स्वतन्त्रता भी वर नहीं, किन्तु अभिशाप ही है। वेद, पुराण, महाभारत, रामायण आदि के अनुसार धर्मराज का एक आदर्श देश के सामने नहीं रखा गया, जिससे गुमराह जनता कहीं कम्युनिज्म, कहीं सोशलिज्म की ओर भटक रही है तथा सरकार के लिये विध्वंसात्मक कार्यवाहियों द्वारा खतरा उत्पन्न कर रही है।

जिस समय राज्य में विद्वान् ब्राह्मण के मुकाबले कुत्ते को भी न्याय सुलभ था, जहां शासक प्रजा की रुचि के अनुसार अपनी निष्कलङ्क त्रैलोक्यसुन्दरी प्राणेश्वरी को भी वनवास दे सकता था, जिस रामराज्य में लोकतन्त्र, साम्यतंत्र, समाजतन्त्र के गुण सब आ जाते थे, परन्तु दोष कोई भी नहीं आने पाता था, राजा और पूंजीपति ही नहीं किन्तु प्रत्येक व्यक्ति जहां जनता और राष्ट्र के

हित में अपना सर्वस्व अर्पण करने के लिए तैयार रहता था, जहाँ देने वाले की ओर से देने और लेने की ओर से न लेने का हठ चलता था, जहाँ आर्थिक असंतुलन का कोई प्रश्न ही नहीं उठता था, जहाँ किसी घर में अन्न-वस्त्र की बेकारी और किसी में अन्न-वस्त्र के अभाव का प्रश्न ही नहीं उठता था, उस रामायणानुसारी रामराज्य के विधान की उपेक्षा करके 'सेक्युलर' राज्य की घोषणा करके धर्म की उपेक्षा को प्रोत्साहित करने से कुछ लाभ न होगा।

'सेक्युलर' के अर्थ धर्महीनता नहीं

धर्म निरपेक्ष राज्य (सेक्युलर स्टेट) की घोषणा से लोगों में एक प्रकार की भ्रांति उत्पन्न हो गयी है लोगों का यह ख्याल है कि धर्म निरपेक्ष राज्य में शासक और जनता का धर्म से सम्बन्ध नहीं रहता। इसी कारण आज धर्म के नाम से उनकी उद्विग्नता होती है। किन्तु यह उनकी भूल है—धर्म निरपेक्ष राज्य का अभिप्राय होता है कि राज्य किसी धर्म के साथ पक्षपात न करे। यदि वहाँ का प्राइम मिनिस्टर या गवर्नर जनरल हिन्दू हो तो वह स्वयं हिन्दू सभ्यता संस्कृति का खूब पालन करे किन्तु दूसरे धर्म वालों के मस्तिष्क में उसे घुसाने का प्रयत्न न करे। इसी तरह यदि प्राइम मिनिस्टर या गवर्नर जनरल अहिन्दू हो तो वह मनमाने धर्म की उन्नति करे पर साथ ही दूसरे धर्म पर आक्रमण न करे। स्वधर्म पालन अपराध नहीं। अपराध तो यह है कि किसी दूसरे के धर्म से विद्वेष किया जाय। वास्तव में धर्म निरपेक्ष या धर्म विहीन (सेक्युलर स्टेट) राज्य का यही तात्पर्य है।

साम्प्रदायिकता क्या है ?

आज लोग धर्म का नाम, हिन्दू का नाम सुनते ही नाक भी सिकोड़ने लगते हैं। कहते हैं कि ये तो साम्प्रदायिक हैं। किन्तु सम्प्रदाय शब्द का अर्थ ही बिलकुल गलत लगाया जा रहा है। सम्प्रदाय शब्द संस्कृत का है इसमें हिंसा कहीं से भी नहीं टपकती। किसी भी ज्ञान-उपासना शिल्प आदि की अनादि अविच्छिन्न परम्परा से प्राप्ति का नाम ही साम्प्रदायिकता है। एक जज भी फैसला करते समय देखता है कि पहले हाईकोर्ट ने कैसा फैसला किया है, वहां भी परम्परा की रक्षा की जाती है। इङ्गलैंड ने ऐसा विचार चलाया था कि अंग्रेजी भाषा का सुधार किया जाय, उसके शब्दों में जो अनर्थक अक्षर हैं उन्हें निकाल दिया जाय जैसे ब्रिज में 'डी' और लिपि का सुधार भी हो। किन्तु वहां परम्परा का लोगों ने जोरों से समर्थन किया और कहा कि प्रत्येक अक्षर का अपना-एक इतिहास है। अतः यह सुधार नहीं होना चाहिये। इस तरह वे लोग परम्परा की रक्षा के लिये कटिबद्ध हैं, किन्तु 'गुरु गुड़ ही रह गये चेला चीनी हो गया' के अनुसार अंग्रेजियत से भरे हुए लोग हैं जो परम्परा बिलकुल समाप्त कर देना चाहते हैं। आजकल साम्प्रदायिकता का अर्थ समझा जाता है किसी वर्ग विशेष की किसी विशेष विचारधारा में हठवादिता के कारण दूसरी विचारधारा वालों को मौत के घाट उतार देने की दुरभिसन्धि। अन्तर्राष्ट्रीय जगत की उन्नति को खतरे में डालकर राष्ट्र की उन्नति

की जाती है तो वह राष्ट्रीयता भी व्यक्तिवाद के समान ही खतरनाक है। यदि यह भावना कम्युनिस्टों में, सोशलिस्टों में आती है तो वे भी साम्प्रदायिक हैं। यदि यह भावना हिन्दुओं में, मुसलमानों में नहीं आती तो वे भी साम्प्रादायिक नहीं। हिन्दू अपनी उन्नति कर सकता है और मुसलमान भी, किन्तु एक दूसरे की उन्नति को खतरे में डालकर नहीं।

अब तो होश में आओ

राष्ट्र की सर्वांगीण एवं स्थिर उन्नति के लिए भौतिक उन्नति के साथ धार्मिक, सांस्कृतिक एवं आध्यात्मिक उत्थान होना आवश्यक है। जब हमारा राष्ट्र युद्ध की अवस्था में था, स्वतन्त्रता संग्राम ही हमारे स्वतन्त्रता - वीरों के मस्तिष्क में व्याप्त था। सैनिकों के सामने दुश्मन से मुकाबला करने की बात ही मुख्य रहती है। धार्मिक, सांस्कृतिक बातें गौण ही नहीं कभी - कभी तो रास्ते में बाधक होने पर ठुकरा भी दी जा सकती हैं। सैनिकों को गम्भीरता से सोचने का अवकाश नहीं रहता। उस समय संस्कृति और धर्म के सम्बन्ध में सैनिकों के गलत विचार एवं अनुचित आचरण भी क्षम्य हो सकते हैं। किन्तु युद्धकाल बीत जाने पर वैसी बात नहीं रहती अतः अब हमें जोश छोड़कर होश में आकर भावुकता से बचते हुए वस्तु स्थिति पर गम्भीरता से विचार करना चाहिए। अब किसी भी नेता द्वारा धार्मिक - सांस्कृतिक नियमों का उल्लंघन क्षम्य नहीं हो सकता। क्योंकि इससे सामान्य जनता को वैसा करने का प्रोत्साहन मिलता है।

प्रवाह को रोक दो

हमें यह देखना चाहिये कि आज की दुनिया क्या चाहती है ? उसकी गति-विधि का निर्णय कर उसके कल्याण के लिये युक्तियुक्त, बुद्धिगम्य, आर्षग्रन्थों एवं मन्त्रब्राह्मणात्मक वेदों से राष्ट्र को अपने कल्याण का मार्ग निर्णय करना चाहिये। हमारा अनन्त दृष्टिकोण भी यही है। आज हिटलर का 'नाजीवाद' लेनिन का 'वर्गवाद' तथा 'लोकतन्त्रवाद', साम्राज्यवाद आदि अनेक 'वाद' हमारे सामने हैं इनमें से किसी ने भी प्राचीन वाद का अनुसरण नही किया। इसीलिए उक्त सभी वाद अपने अपने सिद्धान्तों के प्रचार में असफल होते जा रहे हैं। भगवान् शङ्कराचार्य अपने काल में प्रचलित वादियों के प्रवाह में बह गये होते, तो वे नास्तिकवाद का खण्डन कर उसके स्थान पर प्राचीन वैदिक, आस्तिकवाद का प्रचार न कर सकते। फलतः प्राचीन वैदिक सिद्धांत आज हमें देखने को भी न मिलते। इसी तरह किसी प्रवाह में बह जाना मानवता नहीं। आजकल के व्याख्यानों में बहुधा लोग कहते हैं कि 'दुनिया बहुत आगे बढ़ गई है, अतः उसके बदलने के साथ साथ अपने को भी बदलते चलो। ऐसा न करने वाला समाज एवं राष्ट्र में रहने का अधिकारी नहीं' पर यह ठीक नहीं। वास्तविक पुरुषार्थ इसी में है कि मनुष्य प्रवाह में न बहे। भले ही प्रवाह के रोकने में मर मिटना पड़े, भले ही सारा राष्ट्र उस प्रवाह को रोकने में तैयार न हो, इसकी परवाह नहीं। सच्चे, निर्भीक, स्वार्थ-त्यागी दस बीस कर्मठों के सहयोग से भी सफलता प्राप्त की जा सकती है।

आध्यात्मिकता की रक्षा होनी चाहिये

अब देश स्वतन्त्र है। स्वतन्त्रता के बाद अपनी सभ्यता, संस्कृति की रक्षा की आवश्यकता पड़ गयी। हर देश की अपनी अपनी विशेषता होती है। जर्मनी की विशेषता उसकी शिल्पविद्या और आविष्कार है, अमेरिका की विशेषता उसकी अपार सम्पत्ति है, फ्रांस की विशेषता उसका सौंदर्य है, इङ्गलैंड की विशेषता उसकी कूटनीति है, उसी प्रकार भारत की विशेषता इसकी आध्यात्मिकता, धार्मिकता और नैतिकता है। इसी विशेषता के कारण भारत जगद्गुरु रहा है। जब स्वराज्य के पूर्व हमारी आध्यात्मिकता, नैतिकता और धार्मिकता सुरक्षित रह सकती थी तब कोई कारण नहीं कि स्वराज्य के बाद वे न रह सकें। भगवान् की कृपा से भारत को स्वराज्य मिला है, इसलिये भगवान् के नाम पर इसकी आध्यात्मिकता की रक्षा भी की जानी चाहिये।

धर्महीन स्वराज्य अभिशाप है

स्वतन्त्रता संग्राम में कितने बलिदान हुए। कितने होनहार नौनिहालों ने अपनी माताओं की गोद और पत्नियों की सेज सूनी कर दी और कितने गांव वीरान हो गये तब कहीं भगवान् की कृपा से हमें स्वराज्य मिला। इस स्वराज्य में यदि हम अपनी विशेषता—आध्यात्मिकता, धार्मिकता की रक्षा न कर सके तो यह स्वराज्य हमारे लिये किस काम का। जो सूर्य से विमुख होकर छाया पकड़ना चाहे तो वह पकड़ सकता है ? जो ईश्वर को छोड़कर रोटी के पीछे

दौड़ता है, उसे ईश्वर तो मिलते ही नहीं, रोटी भी नहीं मिलती। रोटी की चिन्ता के कारण स्वराज्य मिलने पर भी लोगों की दशा तो जरा देखिये। आज न सस्ती रोटी है, न सस्ती औषध है और न सस्ता कपड़ा। धर्म विमुख होने से न शांति मिलती और न सुख ही। विश्व शांति के लिये आज संयुक्तराष्ट्रसंघ स्थापित है, फिर भी एक सदस्य-राष्ट्र एक दूसरे से सशंक है। इसका कारण यह है कि वे धर्म से विमुख हैं। धर्म के बिना सच्ची मैत्री असंभव है।

भारत विश्व-शांति का पथ-प्रदर्शक है

यदि रामराज्य के आदर्शानुसार भारतीय जनता और सरकार में परस्पर पिता पुत्र जैसा सहयोग और सद्भावना हो, सभी के रहन-सहन, खान पान में सादगी हो, शिक्षा और स्वास्थ्य का पूर्ण सुधार हो, खाद्य पदार्थों की शुद्ध व्यवस्था हो, व्यायामशालाओं द्वारा भौतिक बल बढ़ाने के साथ धार्मिक संस्थाओं के सहयोग से जीवन के नैतिक बल बढ़ाने का भी प्रयत्न हो तो जगद्गुरु भारतवर्ष ही विश्व शांति का पथप्रदर्शक हो सकता है। परन्तु इसके लिये यह आवश्यक है कि हमारा देश बाह्य चाकचिक्य के प्रलोभनों तथा कृत्रिम आवश्यकताओं का शिकार न बने। सादगी और संतोष के साथ अपने कृषि, वाणिज्य एवं पशुओं के पालन परिवर्द्धनादि कार्यों में तत्पर हो जाय। इससे घृत, दुग्ध, खाद, अन्न, वस्त्र, आरोग्य, स्वास्थ्य तथा सुबुद्धि इन सबकी वृद्धि होगी।

समानता सम्भव नहीं

समानता का स्वप्न देखना भी खतरे से खाली नहीं, अतः न यह संभव ही है। अपने यहां आध्यात्मिक दृष्टिकोण से सर्वत्र ही एक विशुद्ध ब्रह्म का दर्शन किया जाता है। सूकर, कूकर, कीट, पतंगादि सभी प्राणियों में ईश्वर अंश चैतन्यआत्मा का ही निवास है। तभी तो अपने यहां 'उमा जे रामचरन रत बिगत काम मद क्रोध। निज प्रभुमय देखहिं जगत कासन करहिं विरोध ॥' ऐसा कहा गया है। इस दृष्टि से समानता का हमारे यहां बड़ा आदर है। रही बात व्यवहार की उसमें समानता कभी सभव नहीं। क्योंकि व्यवहार में समानता लाना अनर्थ का ही कारण होगा।

क्या सबको समान बनाने के लिये किसी मोटे आदमी को छीलकर पतला किया जा सकता है? नहीं, हमारे यहां यही बतलाया गया है कि वह निर्बल खूबखा-पीकर मोटा ताजा हो जाय। अतएव कोई किसी को अपने बराबर निर्बल बनाकर दबाना चाहे, तो व गड़बड़ है। धर्मराज्य मे व्यापारी अपनी व्यावसायिक कुशलता से लाखों, करोड़ों कमा सकता है। तात्पर्य यह कि उन्नति के रास्ते से ही उन्नति की जा सकती है, अवैध उपायों से नहीं। आधुनिक साम्यवादियों का सिद्धांत है कि सभी को काम, दाम, आराम की समानता होनी चाहिये। पर क्या यह कभी संभव है? क्या सभी आदमी सभी काम कर सकते हैं। जब भोजन तक कोई बराबर नहीं

कर सकता कोई ढाई सेर खाता है और कोई छटांक भर में तृप्त हो जाता है—तो और कार्यो में समानता की बात को कहाँ ? फील्ड-मार्शल और सैनिक तथा इञ्जीनियर और कुली कभी भी एक समान काम नहीं कर सकते। गाय और बकरी में आध्यात्मिक दृष्टिकोण से समानता का दर्शन किया जा सकता है, पर व्यवहार में नहीं। वैतरणी पार होने के लिये गोदान ही किया जाता है, बकरी दान कोई नहीं करता। पारमार्थिक ढंग से समानताका दर्शन करते हुए भी व्यवहारिक भेद बनाए रखना ही बुद्धिमानी है।

कम्युनिस्ट अपने गुरुओं ओर देखें

वास्तव में देश के कर्णधार 'नेतागण' इस समय देश को सुख एवं समृद्धिशाली बनाने के प्रयत्न में लगे हुए हैं, इसमें संदेह नहीं। वर्णाश्रम व्यवस्था का अन्त आदि समस्त योजनायें भी केवल इसीलिए बनाई जा रही हैं कि समानता, स्वतन्त्रता से देश उन्नति के सर्वोच्च शिखर पर चढ़ जाय, विषमता मिटे, संघटन और सामंजस्य की जड़ मजबूत हो। वे धर्म तथा ईश्वर तक को उन्नति के मार्ग में रोड़ा समझ रहे हैं। वास्तव में इन भावों से ही प्रेरित होकर आज भारतीय लेनिन और स्टालिन की नकल करने लगे हैं। पर वर्तमान सुधारकों, सोसलिस्टों एवं कम्युनिस्टों को यह जान लेना चाहिये कि आज भी विदेशी लोग हमारे नैतिक, सामाजिक और अध्यात्मिक ग्रन्थों के अनुवाद करने में लगे हुए हैं। वे लोग हमारे दर्शन, शास्त्र आदि ग्रन्थों के महत्व को भली भांति समझते हैं। वर्तमान तथोक्त

साम्यवाद का जन्मदाता रूस भी इस समय रामायण, महाभारत आदि के अनुवाद में लगा हुआ है जिससे कि भारतीय सरामोराम तत्व और सिद्धान्तों को पा सके।

हमारे देश के सोशलिस्ट, कम्युनिस्ट तथा अन्य उन लोगों को, जिन्होंने ईश्वर और धर्म को अपना शत्रु ही ठहरा लिया है तथा वेद, शास्त्र, रामायण, महाभारत आदि पवित्र ग्रन्थ जिनकी दृष्टि में गडरियों के गीत हैं, उनको अपने इन पाश्चात्य गुरुओं की ओर देखकर शिक्षा ग्रहण करनी चाहिये।

'रामराज्य' का साम्यवाद

आज जितने 'वाद' प्रचलित हैं, उन सभी 'वादों' के गुण रामराज्य में मौजूद थे। रामराज्य में समाजवाद, साम्यवाद, लोकतन्त्रवाद आदि 'वादों' के गुण सन्मिलित हैं। सीता त्याग की कथा रामराज्य के अन्तर्गत लोक भावना का प्रतीक लोकतन्त्रवाद का ज्वलन्त उदाहरण है। लोकमत का आदर कर मर्यादा पुरुषोत्ताम राम ने भगवती सीता को वन भेज दिया। यदि रामराज्य में लोक भावना का समादर न होता तो रजक को प्राणदण्ड तक दे दिया जा सकता था। रामराज्य के अन्तर्गत समाजवाद को लीजिये। रामायण पढ़ने वाले जानते ही होंगे कि सप्तद्वीप के चक्रवर्तीय राजा राजा राम ने अपनी समस्त सम्पत्ति ब्राह्मणों को दे दी थी। आतिथ्य चमत्कार के लिए उनके पास कुछ रह तक नहीं गया। राजा राम स्वयं पात्रोंसे काम चलाते थे। लोकतन्त्र और समाजवादका सभी खूबियां

रामराज्य में थी, उनकी बुराईयां नहीं। पर आज के समाजवाद में तो यह दोष है कि यह वाद बलात् समता लादने का प्रयत्न करता है। नीच को ऊपर उठान ठीक है, पर ऊँच को नीचे गिराना ठीक नहीं। रामराज्य का तो यह उपदेश है कि धनिक राजा और भूमि-स्वामि ये सभी गृहस्थ हैं। रामराज्य में गृहस्थ भोजन बनाकर तब तक भोजन नहीं करता था जब तक आतिथ्य सत्कार नहीं कर लेता था। उस राज्य की तो विशेषता ही यह थी कि पूंजीपति वर्ग दरिद्रता के विनाश में ही पूंजी का उपयोग करता था। इस प्रयत्न में ही अपने को लगाकर वह धन्य-धन्य मानता था। धनिक अपनी इच्छा से धन देता था, पर लेने वाला यह कहकर अधिक धन लेने से इन्कार कर देता था कि मैंने जितना परिश्रम किया, उतना धन मिल गया, अब नहीं चाहिये। रामराज्य की यही विशेषता थी। उस राज्य में धनवान् मजदूरों से प्रार्थना करता था कि और लो, थोड़ा और लो पर लेने वाला यही कहता कि अब पर्याप्त है, आवश्यकता नहीं, अपनी कृपा हम लोगों पर रखिये। रामराज्य के साम्यवाद की घोषणा है—'लो लो—नहीं नहीं'—पर आज के साम्यवाद का आदर्श है—'दो दो—नहीं नहीं।' आज तो मजदूर, किसान कहता है कि आंदोलन करके लेंगे मर कर लेंगे और इसके उत्तर में मालिक कहता है कि मर भी जावोगे तब भी नहीं देंगे। आज के साम्यवाद में मारकाट और दूषित भावना है, जहां रामराज्य के साम्यवाद में मधुर और सुस्वाद भावना थी।

धर्म भावना से ही रामराज्य सम्भव !

जहाँ ब्राह्मण ब्रह्मवर्चस सम्पन्न हों, क्षत्रिय ओज, तेज, बल-वीर्य से पूर्ण एवं धनुर्धर हों, वैश्य अनन्त धन-धान्य सम्पन्न हों, स्त्री सती-साध्वी हों शूद्र विविध कलाओं में पारंगत एवं द्विजाति सेवा परायण हों, महा-बलवान हृष्ट-पुष्ट संतुष्ट नरर्षभ हों, वसुमती अनन्त धान्य देने वाली हो, सौंदर्य, माधुर्य, सौरस्य, सौगन्ध सम्पन्न मधुर मनोहर फल देने वाले वनस्पति हों वहीं रामराज्य धर्मराज्य अथवा ईश्वर राज्य कहलाता है।

यदि किसी का लड़का मर जाता था तो उसके लिये राम ही जिम्मेदार होते थे। रामराज्य में स्त्रियां विधवा नहीं होतीं थीं, कोई ज्वर आदि व्याधियों से पीड़ित नहीं होता था। श्री गांधी जी भी राम-राज्य का गुणगान किया करते थे, वे व्याख्या करते थे जिसमें सबको सस्ती रोटी, सस्ता कपड़ा, सस्ता इलाज और सस्ता न्याय मिले वही रामराज्य है। हमारे रामराज्य में यही विशेषता है। देश स्वाधीन हो गया। अब रामराज्य की स्थापना पर ध्यान देना चाहिये। धर्म ईश्वर की भावना उत्पन्न हो तो रामराज्य हो सकता है। राम के समान जितेन्द्रिय धर्मात्मा पक्ष पात-विहिन शासक हों तभी चोर बाजारी, घुसखोरी बन्द हो सकती है। अन्यथा पुलिस की आंख मे धूल झोंक कर अत्याचार, अन्याय आदि किया जा सकता है। पुलिस भी बेईमान हो सकती है क्योंकि वह भी तो जनता के बीच की ही है कोई सातवें आस-मान से तो आयी नहीं है।

कल्पना से काम नहीं चलेगा

स्वतन्त्र भारत में सभ्यता, संस्कृति और धर्म की रक्षा की आवश्यकता है। स्वराज्य हमें मिल गया है यह सही है, फिर भी हमें बहुत कुछ करना है। स्वतन्त्रता कायम रखने के लिये सरकार के साथ जनता का सद्भाव पूर्ण सहयोग आवश्यक है। थोड़े समय में सभी को सस्ते दाम में न्याय, औषध, रोटी और कपड़ा मिल जायं, इसके लिये प्रयत्न होना चाहिये। यद्यपि शासक भी यही कामना करते हैं कि देश में सबको सभी वस्तुयें सस्ते मूल्य में सुलभ हों, तथापि महंगाई देश को छोड़ कर जाना नहीं चाहिती। जनता भी चाहती है कि महगाई हट जाय पर महंगाई तब तक नहीं समाप्त होगी, तब तक चोरबाजारी और घूसखोरी बन्द नहीं हो जाती। मैं यह मानता हूं कि भ्रष्टाचार रोकने के लिए भ्रष्टाचार निवारण समिति के सदस्य और सरकार का गुप्तचर विभाग अत्यधिक सचेष्ट हैं, पर फिर भी उनकी सचेष्टता सफल नहीं हो रही हैं। और इसमें सफलता तभी मिलेगी जब लोगों में धर्म की भावना का उदय होगा।

× × ×

जहां राम जैसा धर्मनिष्ठ राजा न हो, शासक न हो, वहां मन में रामराज्य की कल्पना कर लेने से रामराज्य, धर्मराज्य और स्वराज्य की स्थापना नहीं हो सकती। स्वराज्य मिल जाने पर भी यदि आज हमारी सभ्यता, संस्कृति और धर्म पर खतरा

है ही, उनका संरक्षण सम्भव नहीं तो ऐसा स्वराज्य सार्थक नहीं, निरर्थक है। किसी देश में किसी ढंग की शासन प्रणाली क्यों न हो, पर सभी जगह धर्मनिष्ठा और सत्यनिष्ठा की आवश्यकता है। ईश्वर और धर्म भावना के अभाव में कोई शासन चल ही नहीं सकता। आप देखते ही हैं कि जब नये मन्त्रिमण्डल का संघटन होता है तब अपना उत्तरदायित्व ग्रहण करने के पूर्व मन्त्रियों को शपथ लेनी होती है। इसलिए उत्तरदायित्व निबाहने के लिये भी ईश्वर और धर्मभावना की सदा अपेक्षा है। आज लोग रामराज्य की रट लगाते हैं और भारत में रामराज्य की स्थापना की कल्पना करते हैं। रामराज्य में जो गुण थे उन गुणों के पालने से ही रामराज्य जैसा राज्य स्थापित हो सकता है।

राम का धर्म नियन्त्रित 'राजतन्त्र'

भारतीय प्राचीन धर्म नियन्त्रित राजतन्त्र में लोकतन्त्र का बड़ा आदर किया जाता था। लोकतन्त्र के सभी गुण उसमें आ जाते थे। रामराज्य में एक धोबी की भी बात सुनी जाती थी। इतना ही नहीं उनके राज्य में कुत्तों और पक्षियों तक को भी न्याय मिलता था। किसी के घर में लाखों संतरे पड़े सड़ जायं और किसी को दवा के लिए एक भी न मिले इस प्रकार की विषमता का अन्त तो होना ही चाहिये। नेता लोग सावधान होकर भारती संस्कृति के मनत्व को समझें और अपनावें।

पूर्ण स्वतन्त्रता

अनन्त सत्ता, अनन्त ज्ञान, अनन्त आनन्द के समान ही अनन्त स्वतंत्रता भी परमात्मा का स्वरूप है। सुतरां पूर्ण स्वतंत्रता में पूर्ण ज्ञान, पूर्ण आनन्द तथा पूर्ण सत्ता सिद्ध हो जाती है। यही कारण है कि प्राणीमात्र जैसे सत्ता, ज्ञान एवं आनन्द को चाहता है, वैसे ही स्वतन्त्रता भी चाहता है। एक नगण्य जन्तु भी बन्धन स्वीकार नहीं करता। किसी पक्षी को स्वर्णपञ्जर में रत्नसिंहासन पर बिठलाया जाय, सुन्दर, मधुर, मनोर फल या पकवान भोजन दिया जाय, शीतल, मधुर, सुगन्धित जल पीने को दिया जाय, फिर भी पराधीनता स्वीकार करने को वह तैयार नहीं होता। स्वाधीनता से वृक्षों की टहनियों पर बैठकर खट्टे फल और खारी पानी पर वह सन्तोष करता है, परन्तु जब तक प्राणी में पूर्ण तत्त्वज्ञान नहीं होता, अविद्या-काम-कर्म का बन्धन नहीं टूटता, शरीरत्रय एवं कोश-पंचक से प्राणी विमुक्त नहीं होता, तब तक जीवभाव बना रहता है। जब तक जीवन भाव की निवृत्ति, परमात्मभाव की प्राप्ति नहीं होता, तब तक किसी न किसी रूप में पराधीनता बनी ही रहती है। जब प्राणी इष्टका-पाषाणादि-निर्मित कारागार में बन्द होने पर एवं लोहमयी शृङ्खला से बद्ध होने पर अपने को पराधीन मानता है, तब फिर अस्थिचर्ममय शरीर-पंजर में बन्द और कर्मरूप बन्धन से बद्ध प्राणी अपने को पराधीन क्यों न माने? अतः सर्वोपाधिविनिर्मुक्त परमात्मभाव की प्राप्ति होने पर ही प्राणी पूर्ण स्वतन्त्र होता है।

पीछे हटो

लोग कहते हैं 'आगे बढ़ो' लेकिन मैं कहता हूँ 'पीछे हटो।' यदि दो हजार वर्ष पीछे हटते हो तो भगवान् शंकराचार्य जैसा उदात्त विचार का आदर्श विद्वान् पाते हो, पाच हजार वर्ष पीछे हटने पर धर्मराज युधिष्ठिर का राज्य एवं नौ लाख वर्ष पीछे हटने पर राम राज्य में आ जाते हो। प्रवाह में तो मुर्दे बहा करते हैं, जिन्दे नहीं। जिन्दा तो प्रवाह से बाहर निकलने के लिये हाथ पैर फटफटाता है। प्रवाह का सामना करते हुए संस्कृति की रक्षा के लिये बढ़े चलो, इसी में कल्याण है।

कोई राजनीति से बच नहीं सकता

आज के जमाने में कोई भी व्यक्ति राजनीति से अछूता नहीं रह सकता। सरकार यदि चाहती है कि धर्म का नाम लेने वाले राजनीति में न बोलें तो राजनीति में भाग लेने वालों को भी चाहिए कि धर्म में न बोलें। यदि सरकार गलतियां करेगी तो धर्म का नाम लेने वाले अवश्य गलतियों को दूर करने का प्रयत्न करेंगे। गलतियां दूर करना भी सरकार का काम करना है।

समय की मांग

आज हमें राणाप्रताप से धर्मवीर राजनीतिज्ञ योद्धा और भामाशाह से दानवीर वैश्यों की आवश्यकता है आज की राजनीति में समय की यही मांग है।